



प्रतीत्यसमुत्पाद सिद्धान्त से अनीश्वरवाद सिद्धान्त का विकास—एक बौद्ध दार्शनिक विश्लेषण

अभिनव दिव्यान्शु

(शोधार्थी)

मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान, इतिहास एवं सभ्यता विभाग
गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय, ग्रेटर नोएडा, यू.पी.

शोध संक्षेप—

प्रस्तुत दार्शनिक शोध पत्र में बौद्ध धर्म के दार्शनिक बिन्दुओं पर प्रकाश डाला गया है। इस शोध पत्र में दार्शनिक पहलुओं पर चर्चा की गई है तथा इसके साथ यह भी चर्चा की गई है कि किस प्रकार से एक सिद्धान्त या विचार से दूसरे सिद्धान्त या विचार का विकास होता है और इसकी परिणति कहाँ होती है? इसके साथ ही सिद्धान्तों का धर्म पर व धर्म से समाज पर क्या प्रभाव पड़ता है। इसके साथ ही एक धर्म का दूसरे धर्म के विचारों से क्या भेद है इसका पता भी चलता है।

मुख्य विषय—

शुरुआत के समय में केवल छः दर्शन थे। बाद में इनकी संख्या नौ (9) तक पहुँच गई। बौद्ध दर्शन प्राचीन भारतीय नौ (9) दर्शनों में से एक गिना जाता है। षड्दर्शनों में प्रमुख हैं— 1. न्याय, 2. वैशेषिक, 3. सांख्य, 4. योग, 5. मीमांसा, 6. वेदान्त। ये छः दर्शन आस्तिक दर्शन माने जाते हैं। इसके अलावा तीन और दर्शनों का नाम आता है और वे हैं— 7. चार्वाक, 8. बौद्ध, 9. जैन। ये तीनों दर्शन नास्तिक दर्शन माने जाते हैं।¹ एक मुख्य बात तो यह जान लेना आवश्यक है कि आस्तिक व नास्तिक का अर्थ क्या है?

सामान्य अर्थ में तो यह माना जाता है कि आस्तिक का अर्थ है जो ईश्वर को मानता है या किसी भी अन्य रूप में उसकी प्रमाणिकता को स्वीकार करता है। इसके अलावा नास्तिक का अर्थ है जो ईश्वर को नहीं मानता और न ही किसी अन्य रूप में उसकी सत्ता या प्रमाणिकता को स्वीकार करता है। परन्तु ये दोनों अर्थ सामान्य अर्थों में ही प्रयोग में लाये जाते हैं।²

परन्तु जहाँ तक दर्शन का प्रश्न है वहाँ स्थिति बदल जाती है और प्रत्येक शब्द का अर्थ एक विशिष्ट अर्थ में ही प्रयोग किया जाता है। जहाँ तक बात भारतीय दर्शन की है तो इन दोनों शब्दों अर्थात् आस्तिक व नास्तिक का अर्थ भी दूसरा है।³ भारतीय दर्शन के अनुसार आस्तिक का अर्थ है जो वेदों को मानता है या उसकी प्रमाणिकता को स्वीकार करता है। नास्तिक का अर्थ है जो वेदों को न माने या उसकी प्रमाणिकता को स्वीकार नहीं करे। इस

¹ चट्टोपाध्याय, श्री सतीशचंद्र तथा दत्त, श्री धीरेंद्र मोहन, : भारतीय दर्शन : पुस्तक भंडार पब्लिशिंग हाउस पटना : पृष्ठ संख्या—60।

² सिन्हा, डॉ० हरेन्द्र प्रसाद, ' भारतीय दर्शन की रूपरेखा', मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली: 2002: पृष्ठ संख्या—6।

³ चट्टोपाध्याय, श्री सतीशचंद्र तथा दत्त, श्री धीरेंद्र मोहन, : भारतीय दर्शन : पुस्तक भंडार पब्लिशिंग हाउस पटना : पृष्ठ संख्या —7।

दार्शनिक विशिष्ट अर्थ में चार्वाक, बौद्ध, जैन ये तीनों नास्तिक दर्शन की श्रेणी में आते हैं क्योंकि ये वेदों को अस्वीकार करते हैं।⁴

बौद्ध दर्शन भी एक नास्तिक दर्शन है क्योंकि यह वेदों को नहीं मानता है तथा वैदिक दर्शन के कई महत्वपूर्ण सिद्धान्तों से इसका भेद व विरोध है। संसार चक्र की व्याख्या भी यह दर्शन अपने विभिन्न विचारों व सिद्धान्तों से करता है और कुछ मामलों में तो यह बौद्ध दर्शन सफल भी हो जाता है। वाद-विवाद व परामर्श की यही दार्शनिक प्रवृत्ति से एक तो बौद्ध दर्शन फलता फूलता है और भारतीय दर्शन को भी कई महत्वपूर्ण सिद्धान्त व दार्शनिक समस्याओं से सफलतापूर्वक निज़ात दिलाता है और उन समस्याओं का हल भी प्रस्तुत करता है।

वैसे तो बौद्ध धर्म में कई पहलुओं पर विचार-विमर्श किया गया है। संसार चक्र की व्याख्या भी प्रस्तुत की गई है। इसके लिए भी कई सिद्धान्त दिये भी गए हैं। इस विभिन्न सिद्धान्तों में से एक सिद्धान्त है प्रतीत्यसमुत्पाद का।⁵ इस प्रतीत्यसमुत्पाद का अर्थ है दूसरे शब्दों में कार्य-कारण सिद्धान्त। अर्थात् प्रतीत्यसमुत्पाद का मतलब है कि प्रत्येक वस्तु किसी कारण के अनुसार होती है। कारण के नाश होने पर वस्तु का भी या कार्य का नाश हो जाता है। इस प्रतीत्यसमुत्पाद से एक बात निकलती है और वह यह है कि प्रत्येक वस्तु नश्वर है। इस तरह यह प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धान्त एक दूसरे सिद्धान्त की ओर दिशा देता है।

भारतीय दर्शनशास्त्र में कई पहलुओं पर चर्चा की गई। इसके साथ ही कई सिद्धान्तों का प्रतिपादन भी किया गया। विचार विमर्श के फलस्वरूप एक सिद्धान्त या विचार से दूसरे सिद्धान्त का विकास हुआ या उसमें उसका परिणाम प्राप्त हुआ। ऐसा ही कुछ बौद्ध धर्म के दार्शनिक पहलुओं के साथ भी हुआ। प्रतीत्यसमुत्पाद से नश्वर का सिद्धान्त निकला जिसमें यह माना गया कि प्रत्येक वस्तु नश्वर है। इस तरह प्रतीत्यसमुत्पाद से अनित्यवाद के सिद्धान्त का विकास हुआ। अनित्यवाद का अर्थ है कि कोई वस्तु स्थिर नहीं है। विश्व की प्रत्येक वस्तु चलायमान है और परिवर्तनशील है। अब चाहे वह जड़ हो या चेतन हो।⁶

महात्मा बुद्ध ने इस अनित्यवाद की व्याख्या करते हुए कहा था कि जो वृद्ध हो सकता है वह वृद्ध होकर ही रहेगा। जिसे रोगी होना है वह रोगी होकर ही रहेगा तथा जो मृत्यु के आधीन है वह मरकर ही रहेगा। धम्मपद में भी कहा गया है कि जो नित्य व स्थायी मालूम पड़ता है वह भी नाशवान है। जो महान मालूम पड़ता है वह भी पतन को प्राप्त होगा।⁷

ध्यान देने वाली बात यह है कि अनित्यवाद को बौद्ध दर्शन में शाश्वतवाद और उच्छेदवाद के मध्य की स्थिति को बतलाया गया है।⁸ यानी कोई वस्तु न तो सत्य है और न ही असत्य। बल्कि वस्तु सत्य और असत्य के बीच की स्थिति में हैं यानी वह परिवर्तनशील है। इस तरह महात्मा बुद्ध ने जीवन को भी परिवर्तनशील कहकर, जीवन में सत्य व असत्य दोनों का समन्वय कर दिया है।⁹

महात्मा बुद्ध के बाद उनके अनुयायियों में कई बार दार्शनिक विचार-विमर्श हुए तथा अब अनुयायियों द्वारा इस अनित्यवाद के सिद्धान्त को और भी आगे ले गए और एक नए सिद्धान्त का विकास हुआ जिसे आगे चलकर

⁴ सिन्हा, डॉ० हरेन्द्र प्रसाद, 'भारतीय दर्शन की रूपरेखा', मोतिलाल बनारसीदास, नई दिल्ली: 2002: पृष्ठ संख्या-6।

⁵ वही पृष्ठ संख्या-121।

⁶ वही पृष्ठ संख्या-121-123।

⁷ वही पृष्ठ संख्या-121।

⁸ चट्टोपाध्याय, श्री सतीशचंद्र तथा दत्त, श्री धीरेंद्र मोहन, 'भारतीय दर्शन': पुस्तक भंडार पब्लिशिंग हाउस, पटना: पृष्ठ संख्या-152।

⁹ सिन्हा, डॉ० हरेन्द्र प्रसाद, 'भारतीय दर्शन की रूपरेखा', मोतिलाल बनारसीदास: नई दिल्ली, 2002: पृष्ठ संख्या-121-122।

क्षणिकवाद का नाम दिया गया। अनित्यवाद का अगला विकसित चरण क्षणिकवाद है।¹⁰ इस क्षणिकवाद के अनुसार हर चीज़ का जीवन या उसका अस्तित्व क्षण भर के लिये ही होता है। इसके अनुसार विश्व की प्रत्येक वस्तु अनित्य के साथ ही साथ क्षणभंगुर भी है। अतः यह क्षणिकवाद का सिद्धान्त अनित्यवाद के सिद्धान्त से भी आगे निकल जाता है। जिस प्रकार एक नदी की एक बूँद क्षण भर के लिए सामने आती है और अगले ही क्षण वह विलीन भी हो जाती है उसी प्रकार संसार की प्रत्येक वस्तु का अस्तित्व क्षण भर के लिए ही हैं।¹¹

इस क्षणिकवाद के समर्थन के लिए बौद्ध धर्म दर्शन में एक महत्वपूर्ण तर्क दिया जाता है जिसे 'अर्थ-क्रिया-कारित्व' का तर्क कहा जाता है। इसका अर्थ है कि किसी वस्तु की सत्ता को तभी तक माना जाता है जब तक उसमें कार्य करने की शक्ति मौजूद हो। यदि कोई वस्तु कोई कार्य उत्पन्न कर सकती है तो उसकी सत्ता है और अगर वह वस्तु कार्य उत्पन्न नहीं कर सकती तो उसकी सत्ता नहीं है।¹² इस तर्क में यह भी कहा गया है कि एक वस्तु एक समय में एक ही कार्य कर सकती है। एक वस्तु से एक ही समय में एक ही कार्य का निर्माण होता है और दूसरे समय में दूसरे कार्य का। इससे यह बात सिद्ध होती है कि पहली वस्तु का अस्तित्व क्षण भर के लिए ही रहता है क्योंकि दूसरी वस्तु के निर्माण के साथ ही पहली वस्तु का अस्तित्व समाप्त हो जाता है।¹³ हालांकि ये और बात है कि विरोधियों द्वारा कई विरोधपूर्ण तर्क क्षणिकवाद के संदर्भ में प्रस्तुत किये जाते हैं। परन्तु फिर भी क्षणिकवाद से कई बातों की व्याख्या तो होती ही है और शायद यही कारण है कि फ्रेंच दार्शनिक बर्गसों ने भी बौद्ध दर्शन के इस क्षणिकवाद को अपनाया है। वे संसार की प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील है के नियम को मानते हैं।¹⁴

वैदिक दर्शन और खासकर उपनिषदों में आत्मा को नित्य व स्थायी तत्व मानता है। आत्मा का अस्तित्व मौत के बाद व मौत के पहले भी बना रहता है। आत्मा का एक गुण नित्य है।¹⁵ आत्मा एक शरीर से दूसरे शरीर में मृत्यु के उपरान्त प्रवेश करती है। इस तरह आत्मा एक अपरिवर्तनशील तत्व है जबकि जड़ यानी शरीर का ही परिवर्तन होता है। श्रीमद्भगवद्गीता¹⁶ का दर्शन तो इसी सिद्धान्त पर टिका हुआ है यद्यपि ये और बात है कि कुछ बौद्धों द्वारा इस पर कटाक्ष किया गया है और वे कुछ ऐसे तर्क प्रस्तुत करते हैं जिनका उत्तर गीता में नहीं मिलता है। तब वे गीता से आगे बढ़कर अपने सिद्धान्त व उसकी व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

परन्तु महात्मा बुद्ध, विलियम जेम्स, बौध नागसेन तथा आधुनिक दार्शनिकों में ह्यूम इस मत से सहमत होते हुए प्रतीत नहीं होते हैं। वे इस आत्मा की कुछ दूसरी ही व्याख्या करने का प्रयास करते हैं।¹⁷ महात्मा बुद्ध इस शाश्वत आत्मा का निषेध करते हुए कहते हैं कि संसार में न कोई आत्मा है और न ही आत्मा जैसी कोई अन्य वस्तु है।¹⁸ पाँच ज्ञानेन्द्रियों के आधार पर मन और उसकी वेदनायें, ये सब आत्मा व आत्मा जैसी किसी अन्य वस्तु को न तो अनुभव करती हैं बल्कि आत्मा जैसी किसी भी चीज़ से बिल्कुल शून्य हैं। न तो आत्मा जैसी किसी चीज़ को हम देख सकते हैं, न सुन सकते हैं, न उसका स्वाद ले सकते हैं, न उसको छू सकते हैं, न ही उसको सूँघ सकते हैं और न ही उसका मन से अनुभव बार-बार कर सकते हैं।

¹⁰ चट्टोपाध्याय, श्री सतीशचंद्र तथा दत्त, श्री धीरेन्द्र मोहन, 'भारतीय दर्शन', पुस्तक भंडार पब्लिशिंग हाउस, पटना: पृष्ठ संख्या-152।

¹¹ सिन्हा, डॉ० हरेन्द्र प्रसाद, 'भारतीय दर्शन की रूपरेखा', मोतिलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 2002: पृष्ठ संख्या-121-122।

¹² चट्टोपाध्याय, श्री सतीशचंद्र तथा दत्त, श्री धीरेन्द्र मोहन, 'भारतीय दर्शन', पुस्तक भंडार पब्लिशिंग हाउस, पटना: पृष्ठ संख्या-154।

¹³ सिन्हा, डॉ० हरेन्द्र प्रसाद, 'भारतीय दर्शन की रूपरेखा', मोतिलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 2002, पृष्ठ संख्या-121-122।

¹⁴ वही, पृष्ठ संख्या-123।

¹⁵ केथ०, ए० बी०, 'वैदिक धर्म एवं दर्शन'।

¹⁶ प्रभुपाद, श्री श्रीमद्स ए०सी० भक्तिवेदान्त स्वामी, 'श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप', भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, हरे कृष्ण धर्म, जुहू मुंबई, 2004।

¹⁷ सिन्हा, डॉ० हरेन्द्र प्रसाद, 'भारतीय दर्शन की रूपरेखा', मोतिलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 2002: पृष्ठ संख्या-123।

¹⁸ वही: पृष्ठ संख्या-123।

दूसरे शब्दों में आत्मा पाँच स्कन्धों के समूह का नाम है। जो है— रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान। इन पाँच स्कन्धों के परिवर्तनशील होने के कारण आत्मा भी परिवर्तनशील है। विलियम जेम्स आत्मा को विज्ञान का प्रवाह मानते हैं। नागसेन भी यही कहते हैं कि जिस प्रकार धुरी, पहिए व रस्सियों के समूह का नाम रथ है उसी प्रकार पाँच स्कन्धों के समूह का नाम आत्मा है। इसी तरह इन पाँच स्कन्धों के संघात या समूह के अलावा कोई आत्मा नहीं है।¹⁹

आधुनिक दार्शनिकों में ह्यूम²⁰ भी कुछ ऐसा ही मत प्रस्तुत करते हुए प्रतीत होते हैं। वे कहते हैं कि जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है तो मैं अपनी आत्मा को देखने के लिए एक बड़ा ही गहरा विश्लेषण करता हूँ और मैं किसी न किसी संवेदना या विज्ञान से टकराकर रह जाता हूँ। ये संवेदना या विज्ञान गर्मी, सर्दी, प्रकाश, छाया, प्रेम, घृणा, दुःख या सुख आदि के ही होते हैं। मैं किसी भी समय इन संवेदनाओं से भिन्न मुझे किसी अलौकिक या पारलौकिक आत्मा की प्राप्ति नहीं होती और न ही मैं संवेदनाओं के अतिरिक्त कुछ और देख पाता हूँ। ह्यूम भी संवेदना के समूह को ही आत्मा का नाम देते हैं। महात्मा बुद्ध की तरह वे आत्मा के नित्य द्रव्य का खण्डन करते हैं।²¹ इस तरह ये लोग व इनके विचार व सिद्धान्त उपनिषदों व वैदिक दर्शन के विरोधी मालूम पड़ते हैं।

अब एक दार्शनिक प्रश्न यहाँ खड़ा होता है और वह यह है कि नित्य आत्मा को माने बिना पुनर्जन्म की कैसे व्याख्या की जाये? महात्मा बुद्ध इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि पुनर्जन्म का अर्थ एक आत्मा का दूसरे में प्रवेश करना नहीं है, बल्कि इसके विपरीत पुनर्जन्म का अर्थ विज्ञान प्रवाह की अविच्छिन्नता है। जब एक विज्ञान प्रवाह का अन्तिम विज्ञान समाप्त हो जाता है तब अन्तिम विज्ञान की मृत्यु हो जाती है और तब एक नये शरीर में एक नये विज्ञान का प्रादुर्भाव होता है।²² इसी को महात्मा बुद्ध ने पुनर्जन्म कहा है।

वे इस पुनर्जन्म की व्याख्या एक ज्योति के सहारे करते हैं। वे कहते हैं कि जिस प्रकार एक दीपक से दूसरे दीपक को जलाया जाता है उसी प्रकार वर्तमान जीवन की अन्तिम अवस्था से भविष्य जीवन की प्रथम अवस्था का विकास सम्भव है। इस विशिष्ट व्याख्या से महात्मा बुद्ध एक नित्य, शाश्वत आत्मा को माने बिना भी पुनर्जन्म की व्याख्या करने में सफल सिद्ध होते हैं। यही बात भारतीय दर्शन में बौद्ध दर्शन को एक विशिष्ट पहचान देती है।²³

जहाँ गीता में आत्मा की नित्यता, स्थायित्व व उसकी शाश्वत्ता पर बल दिया गया है। गीता में स्वयं कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि आत्मा अजर—अमर है। श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णन मिलता है कि—

**नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥ 23 ॥**

श्लोक 23— आत्मा को न तो कोई छेद सकता है, न ही कोई उसे शस्त्रों से मार सकता है, न ही आग उसे जला सकती है, न ही पानी उसे भिगा सकता है और न ही हवा उसे सुखा सकती है।²⁴

वहीं महात्मा बुद्ध इस बात को इन्कार करते हुए एक नई बात प्रस्तुत करते हैं और साथ में ही वे अपनी इस नई व्याख्या से अनात्मवाद के सिद्धान्त को सफलतापूर्वक पुष्ट भी करते हैं।²⁵ इस तरह बौद्ध दर्शन का ये विचार या

¹⁹ वही पृष्ठ संख्या—123।

²⁰ ह्यूम, 'ए ट्रिएटिस ऑफ ह्यूमन नेचर', बुक—1, पार्ट—4, सैक्शन—6।

²¹ सिन्हा, डॉ० हरेन्द्र प्रसाद, 'भारतीय दर्शन की रूपरेखा', मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 2002, पृष्ठ संख्या—123।

²² वही पृष्ठ संख्या—123—124।

²³ चट्टोपाध्याय, श्री सतीशचंद्र तथा दत्त, श्री धीरेंद्र मोहन, 'भारतीय दर्शन', पुस्तक भंडार पब्लिशिंग हाउस, पटना, पृष्ठ संख्या—155।

²⁴ प्रभुपाद, श्री श्रीमद्स ए०सी० भक्तिवेदान्त स्वामी, 'श्रीमद्भगवद्गीता यथारूपः भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्टः हरे कृष्ण धर्मः जुहू मुंबई, 2004: पृष्ठ संख्या—74।

²⁵ चट्टोपाध्याय, श्री सतीशचंद्र तथा दत्त, श्री धीरेंद्र मोहन: भारतीय दर्शन : पुस्तक भंडार पब्लिशिंग हाउस, पटना: पृष्ठ संख्या—155।

सिद्धान्त कि बिना आत्मा को माने पुनर्जन्म की व्याख्या हो सकती है उसे भारतीय दर्शनों में सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करता है। यही भारतीय दर्शन को बौद्ध धर्म की सबसे बड़ी देन है।

इस तरह श्रीमद्भगवद्गीता²⁶ के दर्शन से एक कदम आगे बौद्ध दर्शन चला जाता है। इस तरह बौद्ध एक वैज्ञानिक सोच को प्रदर्शित करता है और एक वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत करता है। बौद्ध दर्शन किसी पारलौकिक या अलौकिक तर्क-वितर्क के झगड़े में नहीं पड़ता बल्कि एक नई सोच के साथ आगे बढ़कर एक नये सिद्धान्त या विचार को सफलतापूर्वक प्रस्तुत करता है और यहीं उसकी महानता है। इस पुनर्जन्म की व्याख्या से बौद्ध दर्शन अपनी एक अलग पहचान विश्व व भारतीय दर्शन में बनाता है।

एक समय था प्राचीन काल में जब यह माना जाता था कि श्रीमद्भगवद्गीता के नित्य आत्मा की पुनर्जन्म की व्याख्या से बढ़ कर और कोई व्याख्या हो ही नहीं सकती। यह एक बहुत ही रूढ़ीवादी दृष्टिकोण था। परन्तु आत्मा का विचार विश्व की अन्य सभ्यताओं व संस्कृतियों से मेल नहीं खा रहा था जिसकी व्याख्या श्रीमद्भगवद्गीता में है। श्रीमद्भगवद्गीता में नित्य आत्मा की पुनर्जन्म की सबसे सुन्दर व्याख्या मिलती है। श्रीमद्भगवद्गीता में एक वर्णन मिलता है कि—

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्वोऽशोष्य एव च ।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥ 24 ॥

श्लोक 24— यह आत्मा अखंडित व अधुलनशील है। इन न तो जलाया जा सकता है, नही सुखाया जा सकता है। यह शाश्वत, सर्वव्यापी, अविकारी, स्थिर व सदैर एक सा रहने वाला है।²⁷

परन्तु श्रीमद्भगवद्गीता की यह आत्मा सम्बन्धित व्याख्या भी अन्य देशों की विचार धाराओं व संस्कृतियों से मेल नहीं खा रही थी क्योंकि गीता पारलौकिक जीवन की ओर चर्चा करती है। दूसरे देशों की संस्कृतियों में इहलौकिक या संसारिक बातों को ज्यादा तवज्जों या प्राथमिकता दी गई है। इसके अलावा बौद्ध दर्शनिकों व महात्मा बुद्ध ने इस आत्मा की व्याख्या को चुनौति दी और एक नई व्याख्या सफलतापूर्वक प्रस्तुत भी की, तो इस पारलौकिक चर्चा का, श्रीमद्भगवद्गीता का तथा और तो और उपनिषदों तक का दार्शनिक धरातल डगमगा गया। परिणाम यह हुआ कि बौद्ध धर्म व दर्शन का विकास विदेशों में ज्यादा हुआ न कि वैदिक धर्म का।

एक बात तो यह भी थी कि वैदिक धर्म में कई बुराईयों व कुरुतियों का विस्तृत तौर पर समावेश हो गया था। वैदिक धर्मके नाम पर अत्याचार, कर्मकांड व अन्य हीन शोषण होने लगे थे। धर्म का आधार दर्शन होता है जो उसे पुष्ट करता है। इन अत्याचार, कर्मकांड व अन्य हीन शोषणों से जनता काफी त्रस्त हो गई थी। अतः विरोधी स्वर भी उठने लगे थे। अत्याचार की इन्तहा हो गई थी।²⁸ धर्म व दर्शन के नाम पर शोषणकारी नियम बने व उनके आधार पर खूब अत्याचार होने लगे। स्थिति तो यहाँ तक पहुँच गई कि मनुष्यों के अलावा पशुओं को भी नहीं बक्शा गया और पूरे भारत में उनकी बड़े पैमाने पर व बड़ी संख्या में नृशन्स और विभत्स तौर पर पशु हत्या की गई। इससे कृषि क्षेत्रा व पशुपालन को सबसे ज्यादा हानि पहुँची। अतः समाज की स्थिति नरक से भी ज्यादा बत्तर हो गई। यह सब 600 ईसा पूर्व में बड़े पैमाने पर हुआ।²⁹

²⁶ प्रभुपाद, श्री श्रीमद्स ए०सी०भक्तिवेदान्त स्वामी : श्रीमद्भगवद्गीता यथारूपः भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्टः हरे कृष्ण धमः जुहू मुंबई: 2004।

²⁷ वही पृष्ठ संख्या—74।

²⁸ शर्मा, रामशरणः प्रारम्भिक भारत का परिचयः ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2009: पृष्ठ संख्या—132।

²⁹ वही पृष्ठ संख्या—145।

अतः सामाजिक उद्धार के लिए कुछ लोग सामने आये और उन्होंने वैदिक धर्मव दर्शन को चुनौति दी और साथ ही में उनका विरोध करके उसको गलत भी साबित कर दिया। यह सब 600 ईसा पूर्व के आस पास घटित हुआ।³⁰

महात्मा बुद्ध ने तो यहाँ तक तर्क से कहा कि एक यज्ञ में पशुबलि देने से अगर तुम्हारे पाप नष्ट होते हैं तो इस पशु की जगह तुम मेरी बलि दो तो तुम निश्चित तौर पर स्वर्ग को प्राप्त करोगे। इस तरह 600 ईसा पूर्व का काल एक धर्मिक क्रान्ति का काल था जिसमें कई विचारधाराएँ जन्मी और बाद में उनका विकास भी हुआ। इसमें सबसे ज्यादा सफलता बौद्ध धर्म व जैन धर्म को मिली। 600 ईसा पूर्व के युग में 62 धर्मिक सम्प्रदायों के बारे में व उनके विचारों के बारे में भी पता चलता है।³¹ बौद्ध ग्रन्थों में इनकी संख्या 62 तथा जैन ग्रन्थों में इनकी संख्या 368 बतायी गई है।³² इस तरह यह साफ तौर पर दिखाई देता है कि किस तरह से नई नई विचारधाराएँ जन्म ले रहीं थीं और पुराने विचारों व सिद्धान्तों को चुनौति दी जा रही थी। नए सिद्धान्तों का प्रतिपादन हो रहा था व वैदिक धर्म को चुनौति दी जा रही थी।

सामान्यतया यह माना जाता है कि इस संसार को ईश्वर ने बनाया है और वह इस संसार का स्रष्टा है। ईश्वर को नित्य व पूर्ण माना गया है। परन्तु महात्मा बुद्ध इस बात से सहमत होते हुए प्रतीत नहीं होते हैं। बुद्ध के अनुसार यह संसार ईश्वर से नहीं बल्कि प्रतीत्यसमुत्पाद के नियम से चलता है। उत्पत्ति व विनाश के नियमों से ही यह संसार संचालित होता है। संसार परिवर्तनशील व अनित्य है। बौद्ध दर्शन के अनुसार इस नश्वर व परिवर्तनशील जगत का स्रष्टा ईश्वर को मानना जो नित्य व अपरिवर्तनशील है, असंगत है।³³

बौद्ध दार्शनिक ये कहते हैं कि अगर यह मान भी लिया जाये कि संसार की रचना ईश्वर ने की है तो स्वाभाविक सा प्रश्न उठता है कि किस प्रयोजन की पूर्ति के लिए की है? अगर वह किसी प्रयोजन की पूर्ति के लिए करता है तो ईश्वर की अपूर्णता परिलक्षित व प्रमाणित होती है। फिर भी उसका प्रयोजन क्या है? इस बात का उत्तर तो केवल ईश्वर ही बता सकता है और जहाँ तक संसार का प्रश्न है इस प्रश्न का उत्तर तो किसी भी पुस्तक व किसी भी मनुष्य के पास नहीं है।³⁴

अतः महात्मा बुद्ध के मत में इस संसार का संचालन ईश्वर नहीं बल्कि प्रतीत्यसमुत्पाद के नियम से होता है। अतः बुद्ध एक अनीश्वरवाद के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं। वे कहते हैं कि संसार का संचालन कारण-कार्य के सम्बन्धों पर टिका हुआ है। ऐसी कोई चीज़ नहीं है जो अकारण हो। कारण का यह नियम विश्व के प्रत्येक क्षेत्रों में काम करता है।³⁵

कुछ विरोधियों के मत में इस कारण के नियम की रचना ईश्वर ने की है और इस कारण के नियम के अनुसार ही संसार का संचालन होता है। परन्तु बात फिर वहीं आके टिक जाती है और वह यह है कि ईश्वर ने किस प्रयोजन के फलस्वरूप कारण के नियम की रचना की या किस चीज़ की पूर्ति के लिये यह नियम बनाया। अगर

³⁰ श्रीमाली, कृष्ण मोहन तथा झा, द्विजेन्द्र नारायण, 'प्राचीन भारत का इतिहास', हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय: 2007: पृष्ठ संख्या-138।

³¹ शर्मा, रामशरण, 'प्रारंभिक भारत का परिचय', ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2009: पृष्ठ संख्या-132।

³² श्रीवास्तव, कृष्ण चन्द्र, 'प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति', यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2007: पृष्ठ संख्या-818।

³³ सिन्हा, डॉ० हरेन्द्र प्रसाद, 'भारतीय दर्शन की रूपरेखा', मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 2002: पृष्ठ संख्या-124।

³⁴ वही पृष्ठ संख्या-124।

उसने यह नियम किसी चीज़ की पूर्ति के लिये बनाया तो उसकी अपूर्णता प्रमाणित होती है। अतः इस कारण के नियम की रचना ईश्वर को मानना एक दोषपूर्ण बात है।³⁶

अतः बुद्ध एक अनीश्वरवाद के सिद्धान्त का समर्थन करते हैं। वे बुद्धिवादी हैं और केवल पौराणिक परम्परा के आधार पर ईश्वर जैसे किसी तत्व या द्रव्य को नहीं मानते। वे ईश्वर पर निर्भर भी नहीं रहना चाहते हैं। वे अत्मनिर्भरता को प्रोत्साहन देते हुए कहते हैं कि अपना प्रकाश स्वयं खोजो और स्वयं प्रकाश बनो और विश्व का उद्धार करो।³⁷

शोध निष्कर्ष—

अगर बौद्ध दर्शन की यह बात कि समस्त संसार कार्य—कारण के नियमों के आधीन कार्य करता है, सही है, तो प्रतीत्यसमुत्पाद का नियम एक सत्य है, यह मानना पड़ेगा। जो एक तर्कपूर्ण बात भी है। अगर प्रतीत्यसमुत्पाद को माना जाये तो यह नियम अनित्यवाद सिद्धान्त को आधार प्रदान करता है और यह अनित्यवाद विकसित होकर क्षणिकवाद में परिवर्तित हो जाता है। इसी क्षणिकवाद से अनात्मवाद का विकास होता है। इसी अनात्मवाद में वे बिना नित्य आत्मा को माने पुनर्जन्म की सपफलतापूर्वक व्याख्या भी महात्मा बुद्ध करते हैं तथा आत्मा की एक नई व्याख्या भी प्रस्तुत करते हैं। आगे चलकर इस अनात्मवाद की परिणति अनीश्वरवाद के सिद्धान्त में होती है और इस तरह बुद्धिवाद का समर्थन होता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची—

1. सिन्हा, डॉ० हरेन्द्र प्रसाद, 'भारतीय दर्शन की रूपरेखा', मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली, 2002.
2. चट्टोपाध्याय, श्री सतीशचंद्र तथा दत्त, श्री धीरेंद्र मोहन, 'भारतीय दर्शन', पुस्तक भंडार पब्लिशिंग हाउस, पटना.
3. बाशम, ए०एल०, 'द वण्डर दैट वॉस इन्डिया' अनुवादक, वेंकटेशचन्द्र पाण्डेय 'अदभुत भारत', शिवलाल अग्रवाल एन्ड कम्पनी, आगरा.
4. जैन, डॉ० सागर लाल, 'जैन, बौद्ध और गीता के आचार दर्शनों का एक तुलनात्मक अध्ययन', प्राकृत भारतीय संस्थान, राजस्थान.
5. केथ०, ए० बी०, 'वैदिक धर्म एवं दर्शन',
6. प्रभुपाद, श्री श्रीमद्स ए०सी० भक्तिवेदान्त स्वामी, 'श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप', भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, हरे कृष्ण धर्म, जुहू मुंबई, 2004.
7. ह्यूम, 'ए ट्रिएटिस ऑफ ह्यूमन नेचर', बुक—1, पार्ट—4, सैक्शन—6.
8. शर्मा, रामशरण, 'प्रारंभिक भारत का परिचय', ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2009.
9. श्रीमाली, कृष्ण मोहन तथा झा, द्विजेन्द्र नारायण, 'प्राचीन भारत का इतिहास', हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2007.
10. श्रीवास्तव, कृष्ण चन्द्र, 'प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति', यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, 2007.

³⁶ वही पृष्ठ संख्या—124।

³⁷ वही पृष्ठ संख्या—125।